समीक्षा :

सुधा ओम ढींगरा की दस प्रतिनिधि कहानियाँ

समीक्षक : डॉ. सीमा शर्मा मेरठ

प्रवासी साहित्य को लेकर हिन्दी जगत में कई तरह की विचारधाराएं हैं। कई विद्वान इसे स्वीकार करते हैं और सराहते भी हैं तो वहीं कुछ लोग इसे सिरे से नकारने का प्रयास करते हैं। ये व्यक्तिगत भिन्नताएं हैं। सभी की अपनी सोच होती है और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता भी है। परन्तु सुधा ओम ढींगरा जैसे प्रतिभाशाली साहित्यकार इन तमाम वाद और विवादों से परे पूरे साहस ईमानदारी और निष्ठा से अपने सृजन कार्य में रत हैं। यह भी तय है कि समय के साथ साथ ऐसे सामर्थ्यवान साहित्यकारों का मूल्यांकन भी होगा और उनके महत्व को भी स्वीकार किया जाएगा। जो मूल्यवान होगा समय के साथ उसकी पहचान अवश्य होगी। चार कहानी संग्रह, चार कविता संग्रह, एक उपन्यास व अन्य रचनाएं लिखकर सुधा ओम ढींगरा ने प्रवासी साहित्यकारों के बीच अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। उनके लेखन की जो शैली है उससे पाठक उनकी रचनाओं के साथ स्वयं को जुड़ा हुआ पाता है। कहानियों में देश काल और वातावरण भले ही अमरीकी हो परन्तु भावनात्मक स्तर पर कहानियों में भारतीयता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। लेखिका की भावनाएं संवेदनाएं और अनुभव शिल्प की दृष्टि से भी बहुत समृद्ध और वैविध्यपूर्ण है। दस प्रतिनिधि कहानियाँ कहानी संग्रह इसका प्रमाण है।

इस संग्रह की पहली कहानी 'बेघर सच' में एक पारम्परिक विषय का चयन किया गया है। जिसे लेकर कहा जा सकता है कि इस विषय पर तो पहले भी बहुत लिखा जा चुका है फिर नया क्या है? परन्तु यह एक ऐसा विषय है जिसकी प्रासंगिकता आज भी उतनी ही है जितनी पूर्व में रही होगी। बेघर सच में तीन पीढ़ियों के पात्र हैं जो स्त्री को अलग अलग स्तर पर बेघर बनाने का कार्य करते हैं इसमें केवल पुरुष पात्र ही नहीं स्त्री पात्र भी अपनी सक्रिय भूमिका निभाते हैं। यह पितृसत्ता का प्रभाव है जिसमें स्त्रियाँ जिस व्यवस्था के कारण शोषित हैं उसी का अंग बन जाती हैं। ऐसे में यह पंक्ति बहुत याद आती है – "स्त्रियाँ पैदा नहीं होती बनाई जाती हैं।" इस कहानी में रंजना की माँ अपना घर तो नहीं तलाश पाती लेकिन अपनी बेटी के दिल इतना अवश्य भरती है तुम्हें कमरा मिलेगा और जब तक मैं जिन्दा हूँ यह घर तुम्हारा है, यह घर तुम्हारा भी है। एक स्त्री के साथ कैसी विडम्बना है जिस घर में उसका जन्म होता है वह घर उसका नहीं होता और जिस घर में ब्याह कर जाती है वह भी नहीं। रंजना की माँ सुनयना ने इस सच को भोगा तब यह सोचा जा सकता था कि यदि वह आत्मनिर्भर होती तो संभवतः स्थिति इससे भिन्न होती परन्तु जब रंजना को भी इसी बेघर सच का सामना करना पड़ता है तो प्रश्न महत्वपूर्ण हो जाता है पति संजय के बराबर पढ़ी लिखी उसी के समान वेतन पाने वाली रंजना भी इसी सच से गुजरती है। तिनका तिनका चुनकर नर मादा नीड़ बनाते हैं, फिर वह नीड़ नर का कैसे हो जाता है? मादा का अधिकार उस पर क्यों नहीं रहता? रंजना नवचेतना सम्पन्न युवती वह समस्याओं के आगे घुटने टेकती। प्रश्न करती है प्रश्नों के जवाब भी पाना चाहती है। कुछ के उत्तर मिल जाते हैं और कुछ अनसुलझे ही रह जाते हैं। वह हार नहीं मानती और बेघर से अपने घर तक का सफर तय करती है।

इस संग्रह की एक अन्य कहानी क्षितिज से परे को यदि बाहरी तौर पर देखें तो बेघर सच से बिल्कुल अलग दिखाई देती है। सारंगी अपने पति सुलभ से चालीस वर्षों के साथ के बाद विवाह विच्छेद के लिए आवेदन करती है और पूरी दृढ़ता के साथ करती है। इतने वर्षों के साथ के बाद ऐसा निर्णय लेना किसी के लिए भी आसान नहीं हो सकता। इस कहानी को सीधे सरल ढंग से पढ़कर कोई निष्कर्ष निकालना कठिन कार्य है। इस कहानी में कई कोण हैं कई परतें हैं जिन्हें मनोवैज्ञानिक स्तर पर समझने की आवश्यकता है। 'बेघर सच' और 'क्षितिज से परे' इन दोनों कहानियों में एक समानता है कि रंजना और सारंगी दोनों ही बेघर होने की यातना को झेलती हैं। सारंगी के रूप में लेखिका ने उन सभी गृहिणियों की वेदना को मुखरित किया जो अस्तित्व हीनता के बोध में जीती हैं। सारंगी के शब्दों में – "मैंने घर परिवार सम्भाला और इन्होंने बाहर फिर एक बुद्धिमान कहलाए और दूसरा बेवकूफ...क्यों" कहने को तो यह एक वाक्य भर है परन्तु एक बहुत बड़े वर्ग की वेदना इसमें छिपी है।

संग्रह की दूसरी कहानी 'कमरा नंबर 103' कोमा में एक एक ऐसी स्त्री पात्र (मिसेज कमला वर्मा) की कहानी है जिसका शरीर निष्क्रिय है परन्तु श्रवण इन्द्रियां और मस्तिष्क पूर्णरूप से सक्रिय है। कहानी दो नर्सों के संवाद से आगे बढ़ती है। सुधा ओम ढींगरा ने इस कहानी से मनोविश्लेषणात्मक शैली का उपयोग किया है जिससे कहानी और भी मार्मिक बन गई है। मिसेज वर्मा केवल एक कहानी का पात्र न रहकर प्रतीक बन जाती है उन तमाम लोगों को जो अपने बच्चों पर भरोसा करके अपनी सब जमापूंजी उन्हें सौंप देते हैं और उनके साथ चल पड़ते हैं पर वहाँ सच्चाई कुछ और होती है उनका जीवन कितना दुर्गम हो जाता है वहां की भाषा जीवनशैली विचार धारा, खान पान उनसे नितान्त भिन्न है। उन परिस्थितियों में सामंजस्य बिठाना उनके लिए एक मुश्किल बन जाता है। वे एक अकेलेपन में फंस जाते हैं। जिनके लिए वे अपना सब कुछ छोड़ आए थे उन्हीं के लिए वे बोझ बन जाते हैं। जिसे वे उतार फेंकना चाहते हैं लेखिका इस माध्यम से इस स्थिति से बचने का संदेश देती है।

समलैंगिता एक ऐसा विषय है जिस पर हिंदी में शायद ही कोई महत्वपूर्ण रचना लिखी गई हो 'आग में गर्मी कम क्यों है' में सुधा ओम ढींगरा ने इसी संवेदनशील विषय पर अपनी लेखनी चलाई है और इस समस्या के विविध पक्षों को जानने का प्रयास किया है। लेखिका की यह विशेषता है जब वे किसी विषय पर लिखती हैं तो उस विषय पर उनकी पकड़ होती है यही कारण है कि उनके लेखन में एक सन्तुलन दिखाई देता है। वे ख्याति पाने के लिए किसी शार्टकट का प्रयोग नहीं करती। कई कहानियाँ ऐसी हैं जिनमें आसानी से अंतरंग दृश्यों को उकेरा जा सकता था परन्तु वे किसी भी कहानी में ऐसा नहीं करती। ये उनकी विशेषता है जो उनके लेखन को विशिष्ट बनाती है और महत्वपूर्ण भी। इससे उनकी कहानियों में कहीं भी हल्कापन नहीं आने पाता बल्कि और भी अधिक गम्भीर बन जाती है।

वर्तमान में जहाँ स्त्री विमर्श पर चर्चा अधिक होती है वहीं लेखिका पीड़ित पुरुष को भी अपनी कहानियों में स्थान देती है वह भी पूरी सच्चाई के साथ। वे समाज के जिस वर्ग में विसंगति देखती हैं उस पर अपनी लेखनी चलाती हैं। उनके अनुभव का संसार बहुत वैविध्यपूर्ण है यही विशिष्टता उनके लेखन में स्पष्ट परिलक्षित होती है। पासवर्ड और वह कोई और थी इन दोनों ही कहानियों में पुरुष शोषित है और स्त्री शोषक है। दोनों कहानियों की पृष्ठ भूमि अलग है कथानक अलग है पात्र योजना अलग है फिर एक स्तर पर कहानियों में समानता दिखाई देती है। हमारी एक सामान्य अवधारणा होती है कि स्त्रियाँ घर को जोड़ने में भरोसा रखती हैं तोड़ने में नहीं ये दोनों कहानियाँ इस सच्चाई से सामना करती हैं कि हमेशा ऐसा नहीं होता वरन इससे उलट स्थितियाँ भी देखने को मिलती हैं दोनों कहानियों के नायक घर को बचाने का भरसक प्रयास करते हैं परन्तु जब वे समझ जाते हैं कि ऐसा सम्भव नहीं है तो वे इन रिश्ते से बच निकलना ही ठीक समझते हैं। सुधा ओम ढींगरा की कहानियों के पात्र चाहे वह स्त्री हो या पुरुष स्वातंत्र्य चेतना से युक्त हैं वे अपने अस्तित्व के साथ एक सीमा तक समझौता करते हैं और उसके बाद वे स्वतंत्रता की राह चुनते हैं।

'टॉरनेडो' कहानी को भारतीय और पाश्चात्य संस्कृति के तुलनात्मक अध्ययन के रूप में देखा जा सकता है जहाँ लेखिका ने भारतीय संस्कृति की स्थापना करने का प्रयास किया है हालांकि हर बार परिस्थितियां एक जैसी नहीं होतीं। कौन सी ज़मीन अपनी कहानी में यह बात स्पष्ट हो जाती है। जहाँ टॉरनेडो कहानी में भारतीय संस्कृति का उदात्त रूप देखने को मिलता है तो वहीं कौन सी ज़मीन अपनी में लालच से भरी स्वार्थी मानसिकता के दर्शन होते हैं।

'सूरज क्यों निकलता है' कहानी इस तथ्य को सामने लाती है कि घर में बच्चों को जिस प्रकार के संस्कार दिए जाते हैं वे एक सीमा तक उन्हें प्रभावित अवश्य करते हैं समय रहते यदि ध्यान न रखा जाए तो बाद में परिस्थितियों को बदलना लगभग असम्भव हो जाता है जेम्स पीटर और उसका भाई बॉबिन इस बात को प्रमाणित करते हैं कुछ लोग मिलने वाली सुविधाओं का उपयोग सकारात्मक उद्देश्यों के लिए करते हैं तो वहीं कुछ नकारात्मकता के लिए जेम्स और पीटर दोनों ही नाकारा नवयुवक हैं जिनकी इच्छाएँ तो बहुत हैं परन्तु दूसरों के बल पर पूरा करना चाहते हैं।

'बिष–बीज' प्रस्तुत कहानी संग्रह की एक महत्वपूर्ण कहानी है। इस कहानी में लेखिका ने कई प्रमुख एवं संवेदनशील बिन्दुओं को एक साथ छुआ है। निजी स्वार्थों के चलते परिवार का विघटन फिर एक बालक का विभिन्न विपरीत परिस्थितियों का सामना करना। विभिन्न स्तरों पर उसका शोषण। एक बालक की ऐसी जीवन स्थितियाँ जोउसे मानवता से अमानवता की ओर अग्रसर करती हैं। एक कुण्ठित व्यक्ति के रूप में उस बालक का विकास होना। उसका एक अपराधी और

शेष पृष्ठ सं. 51 पर

पुस्तक	– दस प्रतिनिधि कहानियाँ
लेखक	– सुधा ओम ढींगरा
प्रकाशक	– शिवना प्रकाशन, सीहोर, म.प्र.
मूल्य	– 100 रु

बे–ऐतबारी की झुर्रियाँ
उसके माथे पर भी देखी हैं
मेरी तरफ देखते, उसके सीने में
खुशी, हाथों में पकड़े कबूतर की तरह छटपटा उठती है'
आखिरकार सच्चाई से नकाब उठाते हुए वे कह ही उठती हैं—
'दिल चाहता है कि जिन्दगी की किताब से
वे सब वर्क फाड़कर फेंक दूँ,
जो अपने फायदे की खातिर
तुमने मेरे मुकद्दर में लिखे हैं!'

पढ़कर अतिया जी की संवेदनशीलता की दाद दिए बिना नहीं रहा जा सकता. इतना ही नहीं, बहुत से प्रतीक और उपमाएं बहुत ही अनूठी और मौलिक हैं–जैसे– चीरे हुए मुर्गे की तरह तड़प, तंग दिली का किला, मसलिहत की छत, फरेब का फर्श, खवाहिश के अंधे घोड़े, आँखों के बरसते बाण, बारिश में डरी हुई बिल्ली की मानिंद, बे–ऐतबारी की झुर्रियाँ आदि.

अतिया जी सिन्धी भाषा की बहुत ऊँची लेखिका हैं और जिस गहराई में जाकर उन्होंने अपने जज्बातों और लफ्जों को तराशा है, वह काबिले तारीफ है. उनके दिल में उतर जाने वाले अनुवाद को पढ़कर यह साफ लगता है कि उसी गहराई में अनुवादिका देवी नागरानी जी भी उतरी हैं.

अनुवाद का कार्य एक जटिल प्रक्रिया है, जिसमें अपने नहीं एक अजनबी के भावों की अभिव्यक्ति होती है और उसका सही सम्प्रेषण होना ही अनुवादक की सफलता की कसौटी है.और इसमें कहीं भी रत्तीभर संदेह नहीं कि देवी जी केवल सफल ही नहीं हुई वरन सफलता की चरम सीमा पर पहुंची हैं. उन्होंने हिन्दी साहित्य को सिंधी साहित्य के नारी–विमर्श के अनूठे सच से रूबरू करवाया है. बुर्कों में घुटती आवाज को बुलंदी का एक नया फलक दिया है. इसके लिए देवी जी निसंदेह अभिनंदनीय हैं. आतिया जी की कलम को भी पाठक–वृन्द का सलाम है.

देवी जी द्वारा अनुदित इस पुस्तक का हिन्दी साहित्य में स्वागत करते हुए हमें असीम सकून मिल रहा है. इससे पूर्व देवी जी ने कुछ हिन्दी कवियों की रचनाओं को सिन्धी में अनुवाद कर उनकी भावनाओं को सिंध–प्रदेश में पहुंचाया है. उम्मीद है देवीजी भिन्न–भिन्न भाषाओं को अपनी मेधावी प्रतिभा और ऊर्जा से सेतु बनाकर जोड़ती रहेंगी और सिन्धी और हिन्दी भाषाओं के साहित्य को समृद्ध करती रहेंगी. आमीन..

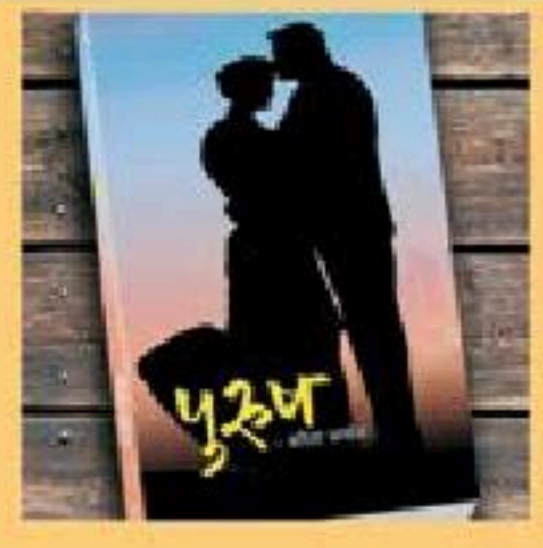

समीक्षा :

मेरी नज़र में सरिता अर्याल के

'पुरुष'

समीक्षक : शिवनारायण पंडित 'सिंगल' नेपाल

नेपाली साहित्याकाश में एक अलग पहिचान के साथ आगे आई है सरिता अर्याल। कथाकार अर्याल द्वारा लिखित कथा संग्रह 'पुरुष' पढ़नेको मिला। मैंने बड़े चावके साथ पढ़ा सोलह कहानियाँ संग्रहित 'पुरुष' कथा संग्रह सरिता अर्याल की दूसरी कृति के रुप मे प्रकाशित है। इस कृति में तमाम कहानियाँ पुरुष प्रधान समाज के अन्दर का विकृति को मूल रूप से चित्रित कर दिखाया गया है। नेपाली समाज के अन्तर्बनोट और उससे सृजित बाल विवाह, प्रेम, यौन हिंसा, उत्पीडन, दमन, या कहें, दहेज प्रथा के कारण समाज मे व्याप्त विकराल समस्या को खोदने का काम उन सभी कहानियों में मुखरित किया गया है। ऐसा चित्रण किसी अन्य लेखक से अलग एक मौलिक लेखन के रुप मे उभरकर सामने आया है। मेरा मानना है कि यथार्थ परक समाज के पुरुषों के भीतर की अन्दरुनी भावनाओं को सामने लाकर अक्षरांकित कर दिखाया हैं कथाकार सरिता अर्याल जी ने ।

भाषाशैली सरल है, पढ़ने में सहज है। ऐसा लगता है कि मानों व्याप्त विकृतियों की पूरी दुकान लगा दी है। कोई भी मनगढन्त बाते नही है। हमारे समाज मे जो है, जैसा है मानों हुबहू उतारकर रख दी है कहानियों में। यद्यपि कई जगह सिलसिले मे कुछ उबड खाबड देखने को मिलता भी है, महज कहानियाँ अच्छी तरह समझमें आती है। इसलिए मेरी ओर से सारी कहानियाँ एक अच्छी सन्देश प्रवाह करती हुई सजीव है, कहना चाहूँगा।

इन कथाओं मे केवल पुरुषों का विकृत चेहरा नही बल्की नारी पात्र की भी गलत वृतियों को भी बखूबी दर्शाया गया है। नारी और पुरुष समाज के दो रुप होते हुए भी एक दूसरे को पूरक हैं। न तो नारी बिना पुरुष पूर्ण है न ही पुरुष बिना नारी पूर्ण है। फिर भी यौन चाहना के कारण उत्पन्न सारी समस्याए इन्ही नारी पुरुष के कारण आती रही है। जबकी यौन तृप्ती जितना पुरुषको चाहिए होता है, उससे कई गुना महिलाको चाहिए होता है। परन्तु नारी पात्र को सहनशीलता, सौम्यता और सलजता के कारण हमारे समाजमे खुलने नही देती ।

इन तमाम कथा को पढ़ने से मुझे ऐसा लगता है कि अगर हमारे समाज मे महिला ओपन हो जाए तो सारे पुरुषों का यौन चाहना मत्थर हो जायेगा।

सरिता अर्याल के तमाम कथाओं मे थोड़ा बहुत यौन असन्तुष्टि को उठानेका प्रयास किया गया है। इससे लगता है कि स्वयं कथाकार सामाजिक विकृतियों के प्रति कुठार बनकर खड़ी है, और दनादन प्रहार करने की कुब्बत रखती है। वैसे भी प्रेम समर्पण है। अगर प्रेम मे समर्पण कम और मांसल मोह ज्यादा हो जाए तो वही प्रेम उच्छृंखल बन जाती है, इसी उच्छृंखलता के कारण समाज मे जबरन बलात्कार की घटनायें घटती है। ऐसा क्यों ?

इसी सवाल का जबाव देने का प्रयास किया गया है कृति 'पुरुष' में। यह कृति 'पुरुष' पठनीय है, सुपाठ्य है और सचेतन है। आज के युग मे नारी कमजोर और अबला नही है। फिर भी कहीं कहीं नारी को अबला के रूप मे चित्रित भी किया गया है। जो समसामयिक प्रगति के प्रवाह विरुद्ध लगता है। समग्र में पुस्तक सुन्दर कलेवर मे आइ दिखती है। नेपाल मे एक सुन्दर कथा के रुप मे सराही गई पुस्तक है। आशा है, इसी तरह के विषयवस्तु प्रविष्टी कर समाज मे व्याप्त कुरीतियों के विरुद्ध समसामयिक कथा आगे और पढ़ने को मिलें। कथाकार सरिता अर्याल को हार्दिक शुभकामनायें।

पृष्ठ सं. 49 का शेष

बलात्कारी के रूप मे परिवर्तन हो जाना। लेखिका को उस बालक से तो सहानुभूति है परन्तु अपराधी बने उस व्यक्ति से नहीं। इसके पीछे जो भी कारण हो लेकिन गलत को सही नही ठहराया जा सकता दोषी पात्र अपने दोष को जानता है तभी तो वह कहता है –"यह एक विकृत मानसिकता है जो हर देश हर शहर हर गाव हर घर हर गली हर कूचे मे मिलेगी। इस मानसिकता के शिकार कई बार बहुत अपने भी होते हैं बाप भाई चाचा ताऊ दूर करीब के रिश्तेदार कोई भी हो सकता है। जिन्हें पहचानना मुश्किल होता है। लेखिका उस पात्र के शब्दो के माध्यम से ऐसी समस्या से सामना कराया है जिसका समाधान आसान नहीं है। वैसे लेखिका ने उसी अपराधी पात्र के माध्यम से समस्या का समाधान भी देने का प्रयास किया है–"मैं अपने कृत्य पर शर्मिंदा हूँ चाहता हूँ कड़ी सजा मिले और सजा में मेरा लिंग काट दिया जाए। एक लिंग कटेगा सौ लिंग सतर्क हो जाएँगे। यह जरूरी है। जहर का बीज वृक्ष बनने से पहले ही दब जाएगा। इस समाधान पर सबकी राय अलग अलग हो सकती है यह लेखिका का अपना मत है। सुधा ओम ढींगरा के कहानी संग्रह दस प्रतिनिधि कहानियां में न केवल उनकी प्रतिनिधि कहानियाँ हैं बल्कि हिन्दी साहित्य की भी महत्वपूर्ण कहानियाँ हैं जो हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाने का कार्य करती हैं।